बीसवीं सदी के आरम्भिक दशकों मे भारतीय शर्तबन्ध श्रमिक प्रणाली के विरोध मे जन—जागृति करने मे समकालीन पत्रकारिता के अथक प्रयास

अमित कुमार सैनी
(सहायक आचार्य)
सन्तोष कुमार महाविद्यालय कासिमपुर, हरदोई

शोध—सारः—

औपनिवेशिक कालीन भारत मे सन् १८३७ ई० से एक नवीन प्रकार की गुलामी प्रथा का ब्रिटिशों ने चलन किया, जिसमे भारतीयों को एक अनुबन्ध के द्वारा भारत से बाहर अपनी विभिन्न औपनिवेशिक कालोनियों मे श्रमिक बनाकर ले जाया गया था। यह मात्र कहने के लिए ही था, कि भारतीय एक अनुबन्ध करार के द्वारा अन्यत्र कालोनियों मे कृषि, बागानों अथवा गन्ना मिलों मे कार्य करने के लिये ले जाये जा रहे है, परन्तु वास्तविकता यह थी कि भारतीयों को एक अनुबन्ध करार के द्वारा दास श्रमिक बनाकर ले जाया गया था। भारत से बाहर औपनिवेशिक कालोनियों मे अनुबन्ध करार के द्वारा भारतीयों के श्रमिक बनकर जाने के विभिन्न कारण रहे थे। भारतीय श्रमिक जब औपनिवेशिक कालोनी मे कदम रखते थे उनके इतिहास का काला अध्याय वही से आरम्भ हो जाता था। भारत मे भारतीयों के साक्षरता, अज्ञानता और एकता के अभाव के कारण कई दशकों तक इस बात से अनभिज्ञ रहे कि अनुबन्ध के द्वारा ले जाये गये भारतीय श्रमिकों पर अनेकों प्रकार के अत्याचार किये जा रहे है। बाद के वर्षों मे जैसे—जैसे साक्षरता बढ़ती गई तब भारतीयों ने अपने प्रवासी श्रमिक बन्धुओं को शर्तबन्दी की गुलामी से मुक्त करने के लिये विरोध किया और आन्दोलन किये। इन विरोधों और आन्दोलनों की आधारशिला समकालीन पत्र—पत्रिकाओं ने ही रखी थी।

शोध—पत्रः—

औपनिवेशिक विस्तार के युग मे ब्रिटिशों ने अपने अनेकों उपनिवेश स्थापित किए, इन उपनिवेशों मे भारत भी ब्रिटिशों का उपनिवेश बना। भारत को छोड़कर अन्य ब्रिटिश उपनिवेश कृषि प्रधान नही थे जबकि भारत की ६० प्रतिशत से अधिक जनसंख्या कृषि पर ही निर्भर ही और साथ ही साथ भारत के समान अन्य उपनिवेशों की अधिक जनसंख्या भी नही थी। भारत मे नील, जूट और मसालों की खेती प्रचुर मात्रा मे होती ही थी अतः ब्रिटिशों ने अपनी अन्य औपनिवेशिक कालोनियों मे चाय, गन्ना, काफी इत्यादि के बागान एवं शक्कर बनाने के कारखाने लगाए, चूंकि उस समय पाश्चात्य देशों मे दास प्रथा का प्रचलन था और दासों के बाजार लगते थे जहॉ पर दासों की खरीद फरोख्त की जाती थी अतः ब्रिटिशों ने अपने खरीदे गये गुलामों के द्वारा इन बागानों एवं कारखानों मे कार्य कराया, धीरे—धीरे यह दास बागानों एवं कारखानों की रीढ़ की हड्डी हो गये थे। दास होने के कारण इनका किसी भी प्रकार का ध्यान नही रखा जाता था, अधिक से अधिक इनसे

काम लेने पर जोर दिया जाता था। १९वीं शताब्दी के आरम्भ मे कुछ ब्रिटिश मानववादियों ने इस प्रथा के बिरोध मे आवाज उठाकर इस अमानवीय प्रथा को समाप्त करने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और अन्ततः दास प्रथा समाप्त हुई।

दासता समाप्त होने के बाद इन कालोनियों मे श्रमिकों की समस्या उत्पन्न हो गई, इसलिए ब्रिटिशों ने दक्षिण अफ्रीका एवं चीन से श्रमिकों का प्रवास कराया परन्तु यह श्रमिक इनके अनुकूल नही निकले, अतः ब्रिटिशों ने अपने भारतीय गुलामो मे से निर्धन, असहाय, बेबस और निरक्षर गुलामों पर दृष्टि डाली एवं एजेन्टों के माध्यम से बहलाकर—फुसलाकर अथवा धोखेबाजी से इन्हें एक अनुबन्ध के द्वारा औपनिवेशिक गन्ना कालोनियों मे प्रवास कराया। इस प्रकार सन् १८३७ ई० मे भारतीय शर्तबन्ध श्रमिक प्रणाली का जन्म हुआ, आरम्भ मे इस प्रणाली पर पश्चिमी देशों के कुछ व्यक्तियों ने सवाल उठाए परन्तु वह प्रभावहीन साबित हुए और सन् १८५० ई० के उपरान्त यह प्रणाली अपनी चरम पराकाष्ठा पर जा पहुॅची।

भारतीय जब औपनिवेशिक गन्ना कालोनियों मे कदम रखते थे तब उन्हे ज्ञात होता था कि उनके साथ छल हुआ है, इतना ज्ञात होने के उपरान्त भी उन्होने वहॉ पर कठोर परिश्रम किया और अपने खून—पसीने से कालोनियों की बंजर और जंगली भूमि को हरा—भरा कर दिया और वहॉ की अर्थव्यवस्था को चरम शिखर पर पहुॅचाया। शर्तबन्ध श्रमिक प्रणाली के अर्न्तगत गए भारतीयों की स्थित भी दासों के समान ही थी, इसमे सामाजिक असंतुलन होने के कारण विभिन्न प्रकार की कुरीतियॉ फैली एवं ब्रिटिश ओवरसीयरों के द्वारा किए गये अत्याचारों से इस प्रणाली पर अधिकतम सवाल उठने लगे।

बीसवीं सदी के आरम्भ मे भारत मे शिक्षित व्यक्तियों की संख्या बढ़ चुकी थी और विभिन्न संगठनों का गठन भी हो चुका था, कई समाजसेवी और राष्ट्रवादी नेता भारत को ब्रिटिश हुकूमत से आजाद करने के लिए प्रयत्नशील थे और यह अपनं विचारों को जनता तक पहुॅचाने के लिए समाचार पत्रों का सहारा ले रहे थे क्योंकि जनसंचार का उस समय यह प्रमुख माध्यम था। भारतीय राष्ट्रवादी एवं समाजसेवियों को जब अपने प्रवासी शर्तबन्ध श्रमिकों की समस्याओं का ज्ञान हुआ तब उन्होने समाचार पत्रों मे प्रमुख स्थान दिया। ब्रिटिश औपनिवेशिक भारत मे रहते हुए अन्य ब्रिटिश औपनिवेशिक कालोनियों मे भारतीयों पर ब्रिटिश अधिकारियों के अत्याचारों को भारत मे समाचार पत्रों के द्वारा जनसंचार करना भारतीय राष्ट्रवादियों का अतुलनीय प्रयास था, यह उनका अथक प्रयास ही था कि शर्तबन्ध श्रमिक प्रणाली के विरोध मे ब्रिटिश सरकार को झुकना पड़ा और अन्ततः भारतीयों की विजय हुई थी।

भारतीय समाचार पत्रों ने शर्तबन्ध श्रमिक प्रणाली के विरुद्ध मे बहुत ही बड़ा आन्दोलन खड़ा किया था। भारतीयों के द्वारा प्रकाशित प्रमुख समाचार पत्रों जैसे— इंडियन रिव्यू, दि मार्डन रिव्यू, विशाल भारत, दि इंडियन सोसल रिफार्मर, इंडियन ओपेनियन, दि सर्वेन्ट आफॅ इंडिया, यंग इंडिया आदि ने इस कुली प्रथा मे फैली हुई बुराइयों को खूब उजागर किया था। इन समाचार पत्रों मे विभिन्न राष्ट्रवादी एवं समाजसेवी भारतीयों के साथ—साथ भारत से बाहर के व्यक्तियों ने जिन्हे भारत एवं भारतीयों के प्रति प्रेम था ने भी शर्तबन्ध श्रमिक प्रणाली के बिरोध अपने—अपने लेख लिखे। भारत मे ही नही विदेशों मे भी

उदारवादी दलों के समाचार पत्रों ने प्रवासी श्रमिक भारतीयों के लिये सहानुभूतिपूर्ण लेख छापे थे जिससे ब्रिटिश सरकार की काफी छवि खराब हो गई थी।

भारत मे अथवा भारत से बाहर भारतीयों द्वारा प्रकाशित समाचार पत्रों के साथ–साथ अन्य ब्रिटिश विरोधी समकालीन समाचार पत्रों ने भर इस शर्तबन्ध श्रमिक प्रणाली के बिरोध मे अथवा इसमे व्याप्त बुराइयों के बिरोध मे लगातार आवाज उठाई। इन समाचार पत्रों ने गन्ना कालोनियों मे प्रवासी भारतीय श्रमिकों के रहन–सहन की दशा, उनके खान–पान की स्थित, श्रमिकों को दी जाने वाली मजदूरी का विवरण, वहॉ पर इनकी राजनैतिक और सामाजिक स्थित को लगातार उजागर किया था, जिससे भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग मे चेतना का संचार हुआ जिस कारण इस वर्ग ने इस प्रथा मे सुधार करने के लिए या फिर बन्द करने के लिए ब्रिटिश सरकार पर दवाब डाला। समाचार पत्रों ने जनचेतना और भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग के विचारों को सामान्य वर्ग मे फैलाने का महत्वपूर्ण कार्य किया, जिसका असर यह हुआ कि सामान्य भारतीय जनता ने औपनिवेशिक गन्ना कालोनियों मे गये अपने भाई–बन्धुओं के ऊपर किए जा रहे ब्रिटिशों के अत्याचारों को पढ़ा और सुना एवं सभी ने अपनी–अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। भारत की भूमि से बहुत दूर गये श्रमिक भारतीयों के साथ क्या हो रहा है, भारतीय सामान्य जनता तक पहुॅचाने और सोई हुई जनता मे जन चेतना फैलाने का कार्य समाचार पत्रों की ही देन थी।

'महाराष्ट्र' नामक समाचार पत्र नागपुर से प्रकाशित होता था, 'प्रवासी' एवं 'भारतवर्ष' यह दो समाचार पत्र बंगाली भाषा मे प्रकाशित होते थे। 'प्रताप' हिन्दी समाचार पत्र जो कि एक राष्ट्रवादी समाचार पत्र था प्रवासी भारतीय श्रमिकों के प्रति इतना निष्ठावान था कि उसने 'कुली प्रथा' नामक पुस्तक ही छाप दी थी। सी०एफ०एन्ड्रयूज एवं डब्लू०डब्लू०पिर्यसन की रिपोर्ट 'इंडन्चर लेबर इन फिजी एन इंडिपेन्डेन्ट इन्क्वायरी' जिसमे सी०एफ०एन्ड्रयूज एवं डब्लू०डब्लू०पिर्यसन ने शर्तबन्दी प्रथा की वास्तविकता को उजागर किया था, चूंकि यह रिपोर्ट अंग्रेजी भाषा मे लिखी गई थी और भारत मे अधिकतर हिन्दी भाषाई लोगों के होने के कारण शर्तबन्दी प्रथा मे वास्तविकता की जानकारी अधिकतम व्यक्तियों को नही हो सकी थी अतः सबसे पहले 'सद्धर्म प्रचारक' नामक पत्र ने इस रिपोर्ट को हिन्दी भाषा मे रुपान्तरित करके प्रकाशित किया था जिससे भारतीय जनता को अपने प्रवासी भाई श्रमिकों की विभिन्न प्रकार की समस्याओं के बारे मे जानकारी हुई थी। 'सरस्वती' नामक मासिक पत्रिका के प्रत्येक अंक मे प्रवासी भारतीयों के सम्बन्ध मे विभिन्न लेखकों के लेख निकला करते थे।

मॉरीशस मे 'हिन्दुस्तानी पत्र' जिसका सम्पादन कुछ समय तक डा० मणिलाल ने भी किया था। 'क्रेसेण्ट' नामक मासिक पत्र मिस्टर दादा ओसमान ने निकाला था, सप्ताहिक गुजराती पत्र 'इंडियन रिव्यू' जो कि मिस्टर एम० सी० आंगलिया ने प्रकाशित किया जिसमे इस प्रथा की खूब आलोचना की गई।

दक्षिण अफ्रीका मे पहला छापाखाना मदनजीत ने खोला था जो कि गुजरात के रहने वाले थे, 'इंडियन ओपेनियन' नामक अखबार डरबन से प्रकाशित होता था मनसुखलाल नागर इसके सम्पादक थे, महात्मा गॉधी जी के अथक प्रयास के बाद १९०३ ई० मे यह प्रकाशित हुआ था। आरम्भ मे यह अखबार चार भाषाओं अंग्रेजी, तमिल,

गुजराती और हिन्दी मे प्रकाशित होता था। मनसुख लाल नागर की मृत्यु के पश्चात हर्बट किचन और उसके बाद एस० एल० पोलाक, अल्बर्ट वेस्ट, मनी लाल गॉधी, सुशीला गांधी, सम्पादक रहे, बाद मे गांधी जी ने अपने फीनिक्स आश्रम से इस अखबार को प्रकाशित किया। दक्षिण अफ्रीका मे जिन–जिन स्थानों पर हिन्दुस्तानी रहते थे वहॉ पर सम्पूर्ण खबरों को प्रसारित करने का कार्य 'इंडियन ओपेनियन' ही करता था। इंडियन ओपेनियन ही एक ऐसा संचार माध्यम था जिसने वहॉ पर रह रहे भारतीयों को एक सूत्र मे बांधने का कार्य किया था।

सन् १९१४ ई० मे 'इंडियन ओपेनियन' ने अपना स्वर्णांक भी निकाला था। 'इंडियन ओपेनियन' अखबार के माध्यम से महात्मा गांधी ने दक्षिण अफ्रीका मे निवास कर रहे भारतीयों मे जनचेतना फैलाने का कार्य किया था। 'इंडियन ओपेनियन' के प्रत्येक अंक मे लगातार शर्तबन्ध श्रमिकों एवं स्वतंत्र भारतीयों के साथ हो रहे जातीय एवं नस्लीय भेदभाव एवं अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठती थी। वास्तविक रुप मे देखा जाये तो यह अखबार दक्षिण अफ्रीका के भारतीय लोगों के वर्तमान इतिहास का आइना हो गया था यही कारण था कि 'इंडियन ओपेनियन' को ब्रिटिश अधिकारी बहुत ही ध्यान से पढ़ते थे, तथा उन्हे पूरा विश्वास था कि यह अखबार भारतीयों को एकजुट कर रहा है जो कि औपनिवेशिक अधिकारियों के लिए अच्छा संकेत नही है इसलिए भारतीय नेताओं को अदालत मे हाजिर होने का आदेश भी दिया गया था। 'अफ्रीकन क्रोनिकज' नामक समाचार पत्र पी० सुब्रमण्यम् अय्यर ने डरबन से निकाला था।

दक्षिण अफ्रीका से भारत वापिस आने के उपरान्त गांधी जी ने भारत मे १९१९ ई० मे 'यंग इंडिया' हिन्दी मे, और 'नवजीवन' हिन्दी और गुजराती मे अहमदाबाद से प्रकाशित किया था। इन दोनो अखबारों मे महात्मा गांधी जी ने शर्तबन्ध श्रमिकों पर हुए अत्याचारों को प्रकाशित किया जिससे भारत के स्थानीय नागरिकों को अपने प्रवासी बन्धुओं की कठिनाइयां ज्ञात हुई इसके अतिरिक्त गॉधी जी ने ब्रिटिश भारतीय सरकार को लगातार सुझाव दिये एवं इस प्रथा को समाप्त करने के लिए दबाव डाला जिस कारण यह अमानवीय प्रथा समाप्त हो पायी थी। 'यंग इंडिया' मे बनारसी दास चतुर्वेदी, सी०एफ० एन्ड्रयूज एवं अन्य भारतीय राष्ट्रवादी व्यक्ति लगातार शर्तबन्दी श्रमिक प्रणाली पर अपने लेखों के द्वारा कठोर प्रहार करते रहे।

दक्षिण अफ्रीका से ही श्री भवानी दयाल सन्यासी ने साप्ताहिक पत्र *'हिन्दी'* निकाला था। जिसमे उन्होने लिखा था– सबसे प्रथम काम जो हमारे प्रवासी भाइयों को करना चाहिए वह यह है कि अपने–अपने उपनिवेश के भारतीयों की स्थित के विषय मे एक ज्ञापन तैयार करके भेंजे। राजनैतिक कठिनाइयों के साथ ही साथ इसमे सामाजिक, शिक्षा संबंधी और आर्थिक प्रश्नों पर प्रकाश डालना चाहिए। ..... प्रवासी भारतीयों का प्रश्न राजनैतिक दलबन्दी का प्रश्न नही है। इसलिये सभी दलों के नेता हमारे कार्य मे सहायक हो सकते है इस पत्र द्वारा प्रवासी भारतीयों से प्रार्थना की जाती है कि वे इस विषय पर अपनी सम्मति शीघ्र ही मुझे भेजने की कृपा करें[४]। 'मर्यादा' पत्र जिसका प्रकाशन श्री संपूर्णानन्द जी के संपादन मे हो रहा था परन्तु १९२४ ई० मे बनारसी दास चतुर्वेदी ने

विशेष संपादन करके 'मर्यादा' का प्रवासी अंक प्रकाशित किया था। जिसमे विभिन्न लेखकों ने इस श्रमिक प्रणाली के विरोध मे अपने विचार व्यक्त किए।

शीतल प्रसाद दुबे ने 'मर्यादा' के प्रवासी अंक मे सूरीनाम के बारे मे लिखा था— सरकार की नीति अब प्रवासी भारतीयों के विषय मे बदल गई है और वह हिन्दुस्तानियों को दूसरी जातियों के अपेक्षा नीचतर ही समझती है। हम लोगों को यहां वे ही अधिकार प्राप्त है, जो किसी दूसरी जाति को प्राप्त है। यहॉ पर काले और गोरे का कोई भेद नही है लेकिन चूँकि हमारे भाई बिल्कुल अक्षिशित है इसलिये जब कभी उन पर टैक्स इत्यादि लगाये जाते है तो वे समझते है कि हमारे साथ ही यह बुरा बर्ताव किया जा रहा है..... .....। अगर हमारे भाइयों को थोड़ी सी भी शिक्षा मिली होती तो वे आपस मे मिलकर काम करते और अपने को ऐसे समाज मे सुसंगठित कर लेते कि सूरीनाम सरकार को उनकी बात सुननी पड़ती।.....हमारे यहॉ के पुरानी चाल के आदमी भी दोष के पात्र है जो वर्ण संबंधी निंदनीय बातों का भी समर्थन करते हैं और पुत्रियों को शिक्षा देने के बिरोधी है। हम लोग यथाशक्ति इस बात का प्रयत्न करेगें कि कहीं भारतीय अन्य जातियों से मिलकर अपने व्यक्तित्व को नष्ट न कर दें और अपनी भारतीयता से हाथ न धो बैंठे। यद्यपि हम लोग भारत से बहुत दूर बसे हुए है फिर भी हम भारतीय है और अपनी मातृभूमि भारतमाता का नाम सुनते ही हमारे ह्रदय प्रफुल्लित हो जाते है[२]। इसके अतिरिक्त 'मर्यादा' ने 'दक्षिण अफ्रीका' नामक शीर्षक से अपना विशेषांक भी निकाला था, जिसमे वहॉ पर भारतीयों को हो रही समस्याओं पर प्रकाश डाला गया था।

'चॉद' पत्रिका का प्रवासी अंक सासाराम बिहार से प्रकाशित हुआ था जिसमे कई लेखकों के लेख एवं कवियों की कवितायें प्रकाशित हुई। जिसमे पं० चन्द्रनाथ जी मालवीय 'वारीश' की कविता के कुछ अंश इस प्रकार थे [३]—

हा! प्रवासी—भाइयों के कष्ट का
हम कहो? कैसे भला अनुभव करें
वे बिचारे यंत्रणाऐं भोगते
शोक! फिर हम क्यों न जीते जी मर जाते।

श्रीधर जी, वात्सल्य की कविता जो कि प्रत्येक भारतीय के ह्रदय को पीड़ित कर देने वाली थी जिसका शीर्षक 'प्रवासी' था, के कुछ अंश निम्न प्रकार थे [४]।

दुख: मे अंतर हुआ न किंचित मात्र है।
तुम 'किसान' से 'कुली कहाने लग गए'।
खंड—खंड बस ह्रदय दु:खों से हो गया—
मृत्यु—मिल नही सुखमय अब तुम मानते
किंतु दुखी के पास न आती मृत्यु भी !!

'विशाल भारत' नामक पत्र जिसका सम्पादन पंडित बनारसी दास चतुर्वेदी जी कर रहे थे, ने प्रवासी अंक जनवरी १९३०ई० मे प्रकाशित किया था जिसमे बहुत से लेख प्रकाशित हुए। इस अंक मे श्री पी० कोदण्डराव ने लिखा— दक्षिण अफ्रीका के यूरोपियन लोगों ने अपने मन मे हिन्दुस्तानियों के विषय मे बड़ी खराब धारणा कर ली थी। भारतीय कुलियों तथा छोटे—मोटे व्यापारियों तक ही उनका ज्ञान परिमित था और भारतीय सभ्यता

तथा संस्कृति से के विषय मे वे बिल्कुल अनभिज्ञ थे। परन्तु जब शास्त्री जी ने विभिन्न स्थानो पर भारतीय संस्कृति पर व्याख्यान दिए तब नेटाल के लार्ड विशप ने कहा कि— 'हम अंग्रेज लोग अब उस जाति से घृणा नही करते, जिस जाति ने शास्त्री जी जैसे व्यक्तित्व को उत्पन्न किया है जिनसे मिलने का सौभाग्य हमें आज प्राप्त हुआ है'[५]। दीवान बहादुर पी० केशव पिल्लई ने लिखा— औपनिवेशिक सरकारों ने कुलियों को बहकाकर इकठ्ठा रखने के लिए जो डिपो खोल रखें है, उनमे भारतीय पुलिस तक को बिना इजाजत जाने की मुमानियत थी। मैने इसे दूर करने की कौंसिल मे बड़ी कोशिश की, परन्तु वह बेकार हुई। भारत के गोरे प्लान्टरों के फायदे के लिए जो कानून बना था, उसमे काम छोड़कर चले जाने वाले मजदूरों के लिए सजा का प्रावधान था, मैने उसके विरुद्ध भी बहुत आन्दोलन किया[६]।

स्वामी भवानी दयाल सन्यासी ने 'दक्षिण अफ्रीका से लौटे हुए भारतीय स्वतंत्र जॉच का परिणाम' नामक शीर्षक से लेख मे वापिस लौटे भारतीयों को दुबारा से भारतीय समाज मे वापिस न लेने के कारणों पर प्रकाश डालते हुए लिखा कि औपनिवेशिक गन्ना कालोनियों से कोई श्रमिक वापिस आ भी जाये तो उसके परिवार वाले उसे घर मे नही रखते समाज बहिस्कार करता है और वह दोबारा से किसी गन्ना कालोनी मे जाने को मजबूर हो जाता है। श्री आई०हेमिल्टन बीटी ने लिखा—भारतवर्ष ने फिजी के भारतीयों की जो सहायता की है, उसके लिए फिजी वाले भारत के कृतज्ञ है, मगर खेद है कि इस विषय मे उन्हे जो कुछ सहायता मिली है, वह भारत सरकार से मिली है, न कि भारतीय जनता से। भारत—सरकार ने उनके हितों की रक्षा के लिए लड़ाई लड़ी है, वह अब तक भी लड़ रही है। परन्तु भारत की जनता ने कभी उनके लिए चिन्ता नही की। इसका फल यह हुआ कि उन्हे अब तक अपनी मातृभूमि से जो कुछ भी सहायता मिली है, वह राजनैतिक और संसारिक है, परन्तु उन्हे इस समय विशेष आवश्यकता है अध्यात्मिक सहायता की। फिजी वालों को पढ़े—लिखे शिक्षित आदमियों की आवश्यकता है[७]। श्री विक्टर सी० रामशरण ने 'ब्रिटिश गयाना की आर्थिक दशा' नामक लेख मे १८३९ ई० से १९२५ ई० के मध्य की आर्थिक दशा पर प्रकाश डालते हुए बताया कि किस प्रकार भारतीयों ने श्रमिक के रुप के वहॉ जाकर अपने खून—पसीने से ब्रिटिश गयाना की अर्थव्यवस्था को मजबूत किया था।

श्री एच०एस०एल० पोलाक जो एक भारतीय नही थे परन्तु उन्हे भारतीयों के प्रति बहुत अधिक दया थी उन्होने लिखा— मैने प्रवासी भारतीयों के प्रतिनिधियों से कई बार इस बात की शिकायत सुनी है कि भारत मे उनके देशवासी अपने ही झंझटों मे इतने व्यस्त रहते है कि वे प्रवासियों के लिए विशेष ध्यान नही दे सकते। यदि इन प्रवासियों के प्रश्नों की ओर विशेष ध्यान नही दिया गया तथा उनकी समस्याओं का बुद्धिमतापूर्ण मनन करने के लिए समय नही निकाला गया, तो किसी भी उपनिवेश के भारतीय प्रवासियों पर आसानी से विपत्ति का पहाड़ टूट सकता है और मातृभूमि का अपमान तथा बेइज्जती हो सकती है[८]। बनारसीदास चतुर्वेदी ने 'लल्लू कब लौटैगो' शीर्षक से वास्तविक घटना लिखी जिसमे एक लड़का शर्तबन्दी मे त्रिनिडाड चला गया वापिस आने के लिए उसके पास धन नही था और वह भारत वापिस नही आ पाया था और यहॉ पर उसके बूढ़े मॉ—बाप लल्लू

कब लौटैगो कहते—कहते स्वर्ग सिधार गये। रायबहादुर श्री रामदेव चोखानी ने लिखा— मेरी तो यही सम्मति है कि हम अपने भाइयों को, जहॉ तक हो सके दूर देशों मे निःसहाय अवस्था मे न भेंजे, क्योंकि उपनिवेशों की सरकारे हमारे भाइयों की सहायता कभी नही कर सकतीं। अच्छा तो यही है कि हम भारत मे ही उनके लिए खेती—बाड़ी तथा काम—धन्धें का ऐसा प्रबन्ध कर दें कि उन्हे बाहर जाने की आवश्यकता ही न हो। ऐसा होने से हम लोग एक बड़ी तोहमत से बच सकते है। यह विषय ऐसा है कि जिसमे गरम—नरम सभी दलों के तथा सभी धर्मो के भारतीय सहयोग कर सकते है, क्योंकि यह प्रश्न मनुष्यता का है[९]।

सभी औपनिवेशिक गन्ना कालोंनियों मे प्रवासी भारतीय महिला श्रमिकों के साथ अमानवीय अत्याचार तो खूब ही किए जाते थे जैसे कि फिजी मे कुन्ती एवं नारायणी पर अंग्रेज ओवरसीयरो ने बहुत ही अधिक अत्याचार किए थे। बाल मुकुन्द गुप्त द्वारा 'भारत मित्र' नामक समाचार पत्र कलकत्ता से हिन्दी मे प्रकाशित होता था, इसी समाचार पत्र ने कुन्ती पर हुए अत्याचार को भारत मे प्रकाशित किया था, भारत सरकार की दृष्टि जब इस पर पड़ी तो उसने इस मामले मे फिजी मे जॉच करवाई थी। भारतीय प्रवासी स्त्रियों पर हो रहे अत्याचारों पर कवि चर्तुवेदी रामचन्द्र विद्यार्थी शर्म्मा, विशारद की ह्रदय विदारक कविता चॉद के प्रवासी अंक मे छपी थी जिसके कुछ अंश इस प्रकार थे [१०]—

नीच कुटिल अधिकारीगण भी पाप कृत्य करते हैं,
इन अभागिनी दुखी नारियों का सतीत्व हरते है।
होता है अति कठिन स्त्रियों को अपना धर्म बचाना,
हाय! असंभव हो जाता है, इन से पिंड छुड़ाना।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची—

1. [1] 'हिन्दी' पत्र— पं0 भवानी दयाल द्वारा नेटाल, दक्षिण अफ्रीका से प्रकाषित— कानपुर कांग्रेस और भारतीय— 24 जुलाई 1925, द्वारा उद्धृत, अवस्थी ,पुष्पिता, सूरीनाम, नेषनल बुक ट्रस्ट, न्यू दिल्ली, 2012, पृष्ठ सं0 28
2. [2] शीतल प्रसाद दुबे, पारामारिबो, सूरीनाम—डच गयाना२८ मार्च १९२३ (मर्यादा, प्रवासी अंक) भारत, द्वारा उद्धृत, अवस्थी ,पुष्पिता, उक्त पृष्ठ सं0 25
3. [3] कविता 'करुण कथा', चांद प्रवासी अंक, जनवरी 1926, द्वारा उद्धृत, अवस्थी ,पुष्पिता, उक्त पृष्ठ सं0 30
4. [4] कविता 'प्रवासी', चांद प्रवासी अंक, जनवरी 1926, श्रीधर जी वात्सल्य, पृष्ठ 272, वर्ष 4 खंड—1, संख्या तीन कवि श्रीधर जी वात्सल्य, द्वारा उद्धृत, अवस्थी ,पुष्पिता, उक्त पृष्ठ सं0 32—33
5. [5] श्री पी० कोदण्डराव 'शास्त्री जी के साथ अफ्रीका मे' विशाल—भारत सचित्र मासिक पत्र (सम्पादक, बनारसी दास चतुर्वेदी) वर्ष तीन भाग, पॉच, जनवरी—जून, १९३०, विशाल भारत कार्यालय, कलकत्ता।
6. [6] दीवान बहादुर केशव पी० पिल्लई, प्रवासियों के सम्बन्ध में मेरे संस्मरण, विशाल—भारत पूर्वोक्त
7. [7] श्री आई हेल्मिन्टन बीटी, फिजी क्या चाहता है? विशाल—भारत पूर्वोक्त
8. [8] श्री एच०एस०एल० पोलाक, भारतीय नेता और प्रवासी भारतीय, विशाल—भारत पूर्वोक्त
9. [9] रायबहादुर श्री रामदेव चोखानी, शर्तबन्दी कुली—प्रथा की एक स्मृति, विशाल—भारत पूर्वोक्त
10. [10] कुली लाइन मे प्रवासी बहिनें (कवि चर्तुवेदी रामचन्द्र विद्यार्थी शर्म्मा, विषारद) चांद का प्रवासी अंक, जनवरी 1926, द्वारा उद्धृत, अवस्थी ,पुष्पिता, पूर्वोक्त पृष्ठ सं0 35

11. अवस्थी ,पुष्पिता, सूरीनाम, नेशनल बुक ट्रस्ट, न्यू दिल्ली, २०१२।
12. कोन्डाप्पी, सी०, इंडियन ओवरसीज १८३८—१९४९, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस,लंदन, १९५१।
13.गांधी, महात्मा,(हिन्दी अनुवाद कालिका प्रसाद) दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, दिल्ली, २०११।
14.टिंकर,ह्यू, ए न्यू सिस्टम ऑफ स्लेवरी,दि एक्सपोर्ट ऑफ इंडियन लेबर ओवरसीज,१८३०—१९२० आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस,बाम्बे, १९७४।
15.सनाढ्य, तोताराम, फिजी द्वीप मे मेरे २१ वर्ष, ज्ञानपुर, बनारसी दास चर्तुवेदी, बनारस, अक्टूबर १९७२।
16.नोर्थुप, डेविड, इंडन्चर लेबर इन दि एज ऑफ इम्पीरिएलिज्म १८३४—१९२२, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, १९९५,

Aayushi International Interdisciplinary Research Journal
ISSN 2349-638X
www aiirjournal.com